जन्मांध क्या दृष्टि पा सकते हैं?

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

कोई बच्चा जो जन्म से अंधा हो, और कई वर्षों तक दृष्टिहीनता से ग्रस्त रहा हो, उसे क्या आंखों की मरम्मत से लाभ हो सकता है? क्या दिमाग इतना लचीला होता है कि जीवन में काफी सालों बाद भी आंखों से मिलने वाली सूचनाओं का उपयोग कर सके?

ये कुछ सवाल थे जो कैम्ब्रिज में एम.आई.टी. के कॉग्निटिव साइन्स विभाग के प्रोफेसर पवन सिन्हा की रुचि के सवाल थे। इन सवालों से शुरू करके वे बहुत आगे गए हैं और कई महत्त्वपूर्ण (और सुखद) खोजें की हैं। खास तौर से उन्होंने इस विषय में काफी महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष हासिल किए हैं कि मानव मस्तिष्क किस तरह से अनुभवों और चुनौतियों के साथ तालमेल बनाता है।

मैंने ऊपर विशेष तौर पर 'मानव' शब्द का उपयोग किया है। कारण यह है कि अब तक उपरोक्त सवालों के संदर्भ में जो भी काम हुआ है वह जंतुओं पर किया गया है, और इसके परिणाम निराशाजनक रहे हैं। उन प्रयोगों से पता चला था कि एक निर्णायक (शायद बहुत छोटी-सी) अवधि होती है जिसमें दृष्टि बहाल होने के बाद दृष्टि सम्बंधी सीखना संभव है। मगर ये प्रयोग तो आम तौर पर अंधकार में पाली गई बिल्लियों पर किए गए थे। सिन्हा ने इन्सानों पर शोध करने की ठानी।

इस मामले में उन्होंने विज्ञान और समाज सेवा का अनोखा मिश्रण किया है। उनकी एक स्कीम है जिसका नाम है प्रोजेक्ट प्रकाश। इसके ज़रिए उन्होंने दिल्ली, राजस्थान और उत्तर प्रदेश के कई ऐसे बच्चों की मदद की है जो मोतियाबिंद के कारण दृष्टिहीन पैदा हुए थे। सिन्हा मोतियाबिंद का ऑपरेशन करके उनकी दृष्टि बहाल करते हैं, और फिर उपरोक्त सवालों के जवाब पाने के लिए उनका अध्ययन करते हैं।

इन लोगों पर उनके अध्ययनों से कई नई-नई बातें पता चली हैं। सबसे पहली बात तो यह पता चली है कि शायद दृष्टि के विकास की कोई सीमित निर्णायक अवधि नहीं है। जन्म के 10-20 साल बाद, जब भी दृष्टि बहाल की जाती है, व्यक्ति दृष्टि का इस्तेमाल करते हुए कई कार्य सीख लेता है।

ऐसे कुछ कार्य हैं आकृतियों की जोड़ियां बनाना, रंगों का मिलान करना, चेहरे पहचानना वगैरह। ये कार्य मस्तिष्क में कहां व कैसे होते हैं? सिन्हा ने इन सवालों के जवाब कामकाजी मेग्नेटिक रेसोनेन्स इमेजिंग यानी एफ.एम.आर.आई. की मदद से खोजे हैं। एफ.एम.आर.आई. एक ज़बर्दस्त चतुर साधन है जिसकी मदद से हम कोशिकाओं और ऊतकों के बीच बहते खून के प्रवाह को देख सकते हैं। यही खून ऊतकों और कोशिकाओं को उनके कामकाज के लिए ऑक्सीजन मुहैया कराता है।

खून में उपस्थित हीमोग्लोबीन का लौह चुंबकीय होता है और इसका चुंबकीय गुण तब बदलता है जब यह ऑक्सीजन अणु को मुक्त कर देता है। तो आप करते यह हैं कि व्यक्ति को एफ.एम.आर.आई. मशीन के अंदर लेटा

देते हैं। यह मशीन एक सुरंग में बिछे पलंग नुमा होती है। व्यक्ति का सिर इस सुरंग के अंदर चला जाता है। अब आप व्यक्ति से कोई काम करने को कहते हैं और यह देखते हैं कि मस्तिष्क का कौन-सा हिस्सा सक्रिय है। उस हिस्से में खून का प्रवाह ज़्यादा होता है।

प्रोजेक्ट प्रकाश से लाभान्वित कई वालंटियर्स के साथ एफ.एम.आर.आई. की मदद से सिन्हा ने एक नई बात पता लगाई। निष्कर्ष यह है कि ये व्यक्ति न सिर्फ देखते और सीखते हैं बल्कि उनके प्रत्युत्तर मस्तिष्क के विशिष्ट हिस्सों में रजिस्टर होते हैं - दूसरे शब्दों में, इन कार्यों के परिपथ उन हिस्सों में पहले से तैयार होते हैं। मस्तिष्क सचमुच लचीला है - वह अपने हिस्सों में नए व स्थान-विशिष्ट से सम्बंधित तंत्रिका संयोजन बना सकता है, चाहे जन्म के बाद दृष्टि कितनी ही देर बाद बहाल की जाए।

इस संदर्भ में एक सवाल पर गौर करना लाज़मी है। यह सवाल तीन सदी पूर्व वैज्ञानिक विलियम मोलीनौ ने ब्रिटिश दार्शनिक जॉन लॉके से पूछा था। उनका सवाल था, "मान लीजिए एक व्यक्ति अंधा पैदा हुआ है और स्पर्श की मदद से एक घनाकार वस्तु और एक गोले के बीच भेद करना सीख जाता है। अब मान लीजिए कि उस दृष्टिहीन व्यक्ति को दिखने लगता है। सवाल है कि क्या अपनी दृष्टि से, उन चीज़ों का स्पर्श करने से पहले वह बता सकेगा कि कौन-सा गोला है और कौन-सा घन?"

जब सिन्हा ने अपने श्रोताओं के समक्ष यह सवाल पेश किया तो ज़्यादातर ने कहा कि वह बता देगा। गलत जवाब। पहली नज़र में वह नहीं बता सकेगा। स्पर्श की अनुभूति स्वतः दृष्टि की अनुभूति में तबदील नहीं होती। इन दो के बीच अंतर्सम्बंध को सीखना पड़ता है, जो बहुत मुश्किल नहीं होता।

सिन्हा के शोध कार्य से यह भी पता चला है कि जब शुरू-शुरू में दृष्टि हासिल होती है, तो पैटर्नों को एक-दूसरे से जोड़ने में थोड़ी मुश्किल होती है। लगता है कि ऐसे जुड़ाव के लिए वस्तुओं की गति या हरकत ज़रूरी होती है। जब किसी व्यक्ति को कंप्यूटर के पर्दे पर दो वर्ग दिखाए जाते हैं तो वह उन्हें दो बताता है (और सही बताता है)। जब ये वर्ग थोड़े-से एक-दूसरे पर चढ़े होते हैं, तो वह तीन कहता है (दो मूल वर्ग और तीसरा वह जो उन दोनों के एक-दूसरे पर चढ़े हिस्सों से बन गया है)। मगर जब दो वर्ग चलते-फिरते दिखाए जाते हैं और एक-दूसरे पर थोड़े चढ़े हुए दिखाए जाते हैं, तो व्यक्ति पहचान लेता है कि ये दो वर्ग ही हैं।

गति के सुराग वास्तव में वस्तुओं के एकीकरण व पृथक्करण को लेकर महत्त्वपूर्ण सूचना प्रदान करते हैं। सूचना का यह गतिशील विश्लेषण ही हमें चेहरे को पहचानने, कार्य-कारण सम्बंध देखने, स्पर्श और दृष्टि का परस्पर सम्बंध समझने वगैरह में मदद करता है। समय के साथ, ये चीज़ें साधारण हो जाती हैं, हम इनके आदी हो जाते हैं।

नई-नवेली दृष्टि से लैस इन लोगों से हमें यह पता चलता है कि हम स्वयं दृष्टि का एहसास और उसके पैनेपन का विकास करते हुए विभिन्न सुरागों का एकीकरण करने, मस्तिष्क में उन्हें संयोजित करने की किन अवस्थाओं से गुज़रे होंगे। यह प्रक्रिया जन्म से लेकर पूरे बचपन में जारी रही होगी। सिन्हा के प्रयोगों से पता चलता है कि इस मामले में महारत हासिल करने के लिए उम्र का कोई बंधन नहीं है।

यह भी तो देखें कि लॉके ने मोलीनौ को क्या जवाब दिया था। "यह सही है कि उसने यह अनुभव हासिल कर लिया है कि एक घन या एक गोला उसके स्पर्श को किस तरह प्रभावित करता है, मगर उसने यह अनुभव हासिल नहीं किया है कि जो चीज़ उसके स्पर्श पर फलां-फलां असर डालती है, वह उसकी दृष्टि पर किस तरह का असर डालेगी; या यह कि किसी घनाकार वस्तु का उभरा हुआ कोना, जो उसके हाथ पर असमान ढंग से दबाव डालता है, वह उसकी आंखों से कैसा नज़र आएगा।" 1694 में अंग्रेज़ी लेखन की यही शैली थी। सरल शब्दों में कहें तो लॉके का जवाब था, "नहीं"।

(स्रोत फीचर्स)